पौराणिक साहित्य में भगवान् शिव

हिन्दू धर्म, संस्कृति एवं दर्शन को समझने के लिये पौराणिक साहित्य का बहुत महत्त्व है। वेदों, उपनिषदों तथा महाकाव्यों(रामायण एवं महाभारत) के उपरान्त पुराणों के अध्ययन से हम अपनी आध्यात्मिक विरासत को गहराई से समझ सकते हैं।

शतपथ ब्राह्मण(14/2/4/10) तथा वृहदारण्यक उपनिषद्(2/4/10) में कहा गया है कि पुराण भी वेदों आदि की भाँति परमात्मा के निःश्वास से ही उत्पन्न हैं। वेदों के संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भाग में भगवान् शिव, विष्णु आदि के विभिन्न कथा-प्रसंग, जो पुराणों में वर्णित हैं, उनका उल्लेख या सूत्र पाया जाता है।

अथर्ववेद(11/7/24) में आया है कि यज्ञ से चारों वेदों के साथ पुराण उत्पन्न हुए। छान्दोग्य उपनिषद्(7/1/2) में भी पुराण का उल्लेख आया है। वहाँ पर पुराणों को पञ्चम वेद कहा गया है-**'इतिहास पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम्।'** पद्मपुराण में कहा गया है कि 'जो ब्राह्मण अंगों एवं उपनिषदों सहित चारों वेदों का ज्ञान रखता है, उससे भी बड़ा विद्वान् वह है जो पुराणों का विशेष ज्ञाता हो।'

यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विजः।
पुराणं च विजानाति यः स तस्माद्विचक्षणः।। (पद्म.पु. सृष्टिखण्ड 2/50)

ब्रह्माण्डपुराण के प्रक्रियापाद में 'पुराण' शब्द की निरूक्ति इस प्रकार की गयी है-

यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदान् द्विजाः।।
न चेत् पुराणं संविद्यान्नैव स स्याद्विचक्षणः।।
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति।।
यस्मात्पुरा ह्यभूच्चैतत् पुराणं तेन तत्स्मृतम्।
निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापैः प्रमुच्यते।। (अध्याय-1/170-171, 173)

अर्थात्- "अङ्ग और उपनिषद् के सहित चारों वेदों का अध्ययन करके भी, यदि पुराण को नहीं जाना गया तो ब्राह्मण विचक्षण नहीं हो सकता; क्योंकि इतिहास-पुराण के द्वारा ही वेद की पुष्टि करनी चाहिये। यही नहीं, पुराण-ज्ञान से रहित अल्पज्ञ से वेद डरते हैं; क्योंकि ऐसे व्यक्ति के द्वारा ही वेद का अपमान हुआ करता है। अत्यन्त प्राचीन तथा वेद को स्पष्ट करनेवाला होने से ही इसका नाम 'पुराण' हुआ है। पुराण की इस व्युत्पत्ति को जो जानता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।"

प्रमुख पुराणों की संख्या प्राचीन काल से 18 मानी गयी है। इन अष्टादश पुराणों का नाम प्रायः प्रत्येक पुराण में उपलब्ध होता है। ये अठारह पुराण महापुराण के नाम से जाने जाते हैं। इनके अलावा

18 पुराण, 18 उपपुराण, तथा 18 अतिपुराणों का भी प्रचलन है। इस प्रकार पुराण साहित्य भी उपनिषदों की तरह काल-क्रम से काफी विस्तृत हो गया है। समय के साथ-साथ न केवल प्रमुख महापुराणों में परिवर्तन-परिवर्द्धन हुए अपितु नये-नये पुराणों की भी रचना हुई। यही कारण है कि नाना प्रकार के साम्प्रदायिक तत्त्व प्रमुख पुराणों में घुस गये और उन तत्त्वों के समर्थन में अलग से भी पुराण-उपपुराण रच दिये गये। अगर हम प्रमुख पुराणों(महापुराण) को गहराई से पढें तथा उसके अन्तर्गत निहित विषम तत्त्वों को उस पुराण की समग्र विचाधारा से ताल-मेल बैठाकर देखें तो साम्प्रदायिक व मिलावटी बातें आसानी से पकड़ में आ सकती हैं।

पुराण के 5 लक्षण बताये गये हैं, अर्थात् पुराणों में 5 तरह की बातें होती है-

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मनवन्तराणि च।

वंशान्चरितञ्चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।। [1] (वराहपु. 2/4)

अर्थात्-पुराणों में (1) मन्वन्तर विज्ञान, (2) सृष्टि विज्ञान (सर्ग), (3) प्रतिसृष्टि विज्ञान (प्रतिसर्ग), (4) वंश विज्ञान तथा वंश्यानुचरित विज्ञान पाये जाते हैं।

प्रमुख पुराणों के नामों के बारे में एकमत नहीं है। पुराणों की एक गणना(देवी भागवत, नारद तथा मत्स्यपुराण) के अनुसार-ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु, भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़ तथा ब्रह्माण्ड-महापुराण की श्रेणी में हैं। जबकि कूर्म, पद्म, ब्रह्मवैवर्त, भागवत, मार्कण्डेय, लिंग, वराह तथा विष्णुपुराण के अनुसार वायुपुराण की जगह शिवपुराण को चौथा महापुराण मानना चाहिये। अर्थात् या तो शिवपुराण को या वायुपुराण को महापुराण की गिनती से बाहर करना पड़ेगा। इसी प्रकार स्कंदमहापुराण में शिव एवं वायु दोनों को ही महापुराणों में सम्मिलित किया गया है जबकि ब्रह्माण्डपुराण को नहीं किया गया। ज्यादातर ग्रन्थों में शिव तथा ब्रह्माण्डपुराण को ही महापुराण माना गया है। शिवपुराण को महापुराण मानने का एक और भी कारण है कि इसके अन्तर्गत वायुपुराण की सभी प्रमुख बातों का समावेश है। एक और बात ध्यान देने की है कि हम चाहे शिवपुराण को चाहे वायुपुराण को चौथा पुराण माने दोनों ही हालत में चौथे पुराण के प्रमुख देवता(तथा विषय) भगवान् शिव ही हैं।

मत्स्यपुराण(53/67-68) के अनुसार पुराणों का त्रिविध विभाजन-सात्त्विक, राजस तथा तामस किया गया है। सात्त्विक पुराणों में विष्णु, राजस पुराणों में ब्रह्मा तथा अग्नि तथा तामस पुराणों में शिव का माहात्म्य अधिकांशत: वर्णित है। इसी प्रकार की बात स्कंदपुराण के प्रभासखण्ड के (अध्याय 1) में भी कही गयी है पद्मपुराण में भी पुराणों का इसी तरह विभाजन किया गया है। इसके अनुसार मत्स्य, कूर्म, लिङ्ग, शिव, स्कन्द, अग्नि-ये छ: पुराण तामस हैं। ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त,

1. यही श्लोक मत्स्यमहापुराण (53/64) में भी पाया जाता है। पर वहाँ पर 'वंशानुचरितं' शब्द की जगह 'वंश्यानुचरितं' है।

मार्कण्डेय, भविष्य, वामन और ब्राह्म- ये छः राजस पुराण हैं तथा विष्णु, नारद, भागवत, गरुड, पद्म तथा वराह-ये छः सात्त्विक पुराण माने गये हैं(पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, 236/18-21)।

स्कन्दपुराण की दृष्टि में दस पुराणों में विशेष रूप से शिव की स्तुति है; चार में ब्रह्मा की और दो में देवी तथा हरि की है(स्कन्द, महापु. प्रभास खण्ड अ. 1)। यहाँ पर इन पुराणों का नाम नहीं दिया गया है कि किन में किस देव का विशेष वर्णन हुआ है। तमिल ग्रन्थों में पुराणों के पाँच वर्ग किये गये हैं जिनमें से शिव की महिमावाले-शिव, स्कन्द, लिंग, कूर्म, वामन, वराह, भविष्य, मत्स्य, मार्कण्डेय तथा ब्रह्माण्ड-ये दस पुराण हैं। विष्णु की महिमावाले-नारद, श्रीमद्भागवत, गरुड तथा विष्णु ये चार पुराण हैं। ब्रह्मा की महिमावाले-ब्रह्मवैवर्त और पद्मपुराण हैं। सूर्य की महिमावाला ब्रह्मवैवर्तपुराण तथा अग्नि की महिमावाला अग्निपुराण है।

पुराणों का उपरोक्त कोई भी वर्गीकरण तथ्यतः सही नहीं है तथा उनके पिछे साम्प्रदायिक भावनायें भी जुड़ी हुई प्रतीत होती हैं।

पुराणों की कथाओं में एक बात बुद्धिवादी लोगों की दृष्टि में प्रायः खटकती है-वह यह कि पुराणों में जहाँ जिस देवता, तीर्थ या व्रत आदि का महत्त्व बतलाया गया है, वहाँ उसी को सर्वोपरि माना है। जहाँ जिस देवता को श्रेष्ठ माना गया है वहाँ अन्य सभी देवों द्वारा उसकी स्तुति करायी गयी है। गहराई से न देखने पर ये बातें बेतुकी सी प्रतीत होती हैं। परन्तु इसका तात्पर्य यह है कि भगवान् का यह लीलाभिनय ऐसा आश्चर्यमय है कि इसमें एक ही परिपूर्ण भगवान् विभिन्न विचित्र लीलाव्यापार के लिये और विभिन्न रुचि, स्वभाव तथा अधिकारसम्पन्न साधकों के कल्याण के लिये अनन्त विचित्र रूपों में नित्य प्रकट हैं। भगवान् के ये सभी रूप नित्य, पूर्णतम और सच्चिदानन्दस्वरूप हैं। अपनी-अपनी रुचि और निष्ठा के अनुसार जो जिस रूप और नाम को इष्ट बनाकर भजता है, वह उसी दिव्य नाम और रूपों से समस्त रूपमय एकमात्र भगवान् को प्राप्त कर लेता है। क्योंकि भगवान् के सभी रूप परिपूर्णतम हैं और उन समस्त रूपों में एक ही भगवान् लीला कर रहे हैं।

व्रतों के संबंध में भी यही बात है। अतएव श्रद्धा और निष्ठा की दृष्टि से साधक के कल्याणार्थ जहाँ जिसका वर्णन है, वहाँ उसको सर्वोपरि बताना युक्तियुक्त ही है। और परिपूर्णतम भगवत्सत्ता की दृष्टि से सत्य भी है। तीर्थों की बात यह है कि भगवान् के विभिन्न नाम-रूपों की उपासना करने वाले संतो, महात्माओं और भक्तों ने अपनी कल्याणमयी सत्साधना के प्रताप से विभिन्न रूपमय भगवान् को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार नाम-रूप में अपने ही साधन-स्थान में प्राप्त कर लिया और वहीं उनकी प्रतिष्ठा की। एक ही भगवान् अपनी पूर्णतम स्वरूप-शक्ति के साथ अनन्त स्थानों में अनन्त नाम-रूपों में प्रतिष्ठित हुए। भगवान् के प्रतिष्ठास्थान ही तीर्थ हैं, जो श्रद्धा, निष्ठा और रुचि के अनुसार सेवन करनेवाले को यथायोग्य फल देते हैं। यही तीर्थ-रहस्य है। उस दृष्टि से अनेक तीर्थों को सर्वोपरि बतलाना सर्वथा उचित है।

भगवान् शिव एवं विष्णु आदि देवरूप सब एक हैं, इसकी पुष्टि तो इसी से भलीभाँति हो जाती है कि शैव कहे जानेवाले पुराणों में भी विष्णु की और वैष्णव पुराणों में भी शिव की महिमा गायी गयी है और दोनों को एक या अभिन्न बताया गया है तथा उक्त पुराणविशेष के विशिष्ट प्रधान देव ने अपने ही श्रीमुख से अन्य पुराणों के प्रधान देवता को अपना ही स्वरूप बतलाया है।

कई बार पुराणों में परस्पर विरोधी या थोडी-थोडी भिन्नता के साथ कथाएँ मिलती हैं। इन भिन्नताओं का एक कारण समय के साथ ग्रन्थों में साम्प्रदायिक भावनाओं का जुड जाना है। अर्थात् बहुत सी कथाओं में मिलावट कर अपने सम्प्रदाय को पुष्ट करने अथवा दूसरे को हेय दिखाने का प्रयास किया जाना है। दूसरा कारण कथाओं का कल्प भेद है। 360 मानवीय वर्ष देवताओं के एक वर्ष के बराबर तथा 12000 देववर्ष का एक चतुर्युग (अर्थात् सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग इन सभी की सम्पूर्ण आयु) और 1000 चतुर्युग ब्रह्मा का एक दिन होता है। और यही एक कल्प का मान भी है। एक कल्प में 14 मनु बीत जाते हैं। अर्थात् 14 मनवन्तर बीत जाते हैं। कल्प के अन्त में नैमित्तिक या ब्राह्म प्रलय होता है। उपरोक्त गणना के मुताबिक 100 वर्ष की आयु ब्रह्मा को प्राप्त है। प्रत्येक कल्प में सृष्टिरचना की प्रक्रिया तथा सृष्टवस्तुओं के स्वरूप आदि लगभग मिलते जुलते हैं। फिर भी कभी-कभी कुछ बातों में काफी अन्तर होता है। वेद में भी प्रत्येक कल्प में होनेवाली सृष्टि की समानता का संकेत है-

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चाऽन्तरिक्षमथो स्वः।।

(ऋ.वे. 10/190/3 तथा तैत्तिरीय आरण्यक 10/1/14))

पुराणों के सृष्टितत्त्व को जाननेवाले लोग इसे सहज में ही समझ सकते हैं। उदाहरण के लिये वायुपुराण की कथाएँ श्वेतकल्प की, नारदपुराण की वृहत्कल्प की, अग्निपुराण की ईशानकल्प की, भविष्यपुराण की कथाएँ अघोरकल्प की, लिंगपुराण की अग्निकल्प की, भागवत की ब्राह्मकल्प की, वराहपुराण की मानव कल्प की, मत्स्यपुराण में सात कल्पों की, गरुडपुराण में तार्क्ष्यकल्प की कथाएँ हैं।[1]

आगे के अध्यायों में हम शिवतत्त्व एवं उससे संबंधित अनेक तथ्यों को विभिन्न पुराणों के संदर्भ में देखेंगे। समझने की सुविधा को देखते हुए हम आगे के अध्यायों को कई उपअध्यायों में बाँट कर शिवतत्त्व की विवेचना करेंगे। प्रत्येक अध्याय में पुराण विशेष या चन्द पुराणों के आधार पर विवेचना की जायगी।

---

1. **क्वचिद्ब्रह्मा क्वचिद्विष्णुः क्वचिद्रुद्रः प्रशस्यते।**
तत्तत्कल्पान्त वृत्तान्तमधिकृत्य महर्षिभिः।।
तानि तानि प्रणीतानि विद्वांस्तम न मुह्यति।

सभी महापुराणों तथा कई उपपुराणों के अध्ययन से यह बात स्पष्टरूप से उभर कर आती है कि भगवान् शिव ही परम तत्त्व अथवा ब्रह्म हैं जिनके निर्गुण एवं सगुण दो रूप हैं। निर्गुण रूप में भगवान् शिव को कूटस्थ, अचिन्त्य, चैतन्यस्वरूप, मन-वाणी से परे, अविनाशी, निरञ्जन, एक, ॐकारस्वरूप, नित्य, शुद्ध तथा निष्प्रपंच कहा गया है। सगुणरूप में उन्हें सृष्टिकर्त्ता, पालनकर्त्ता, संहारकर्त्ता, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्रस्वरूप, जगत्स्वरूप, तीनों लोकों के अधीश्वर, पंचमुख, दस भुजावाले, त्रिनेत्र, चन्द्रमा, गंगा, गजचर्म, मृगचर्म, मुण्डमाला, त्रिशूल, तथा पिनाक आदि को धारण करनेवाले, वरदाता, आशुतोष, भोग-मोक्षदाता, अर्द्धनारीश्वर, नीलकंठ, त्रिपुर, जालंधर तथा अंधक आदि राक्षसों का वध करनेवाले, पशुपति, भूतपति, जगत्पति, कैलासवासी, सब पर दया करनेवाले, भक्तवत्सल, लिंगरूप, वृष पर सवारी करनेवाले तथा कर्पूर के समान गौर वर्णवाले इत्यादि विशेषणों व संज्ञायों से युक्त माना गया है।

इसी प्रकार भगवान् शिव की लिंगोपासना को पुराणों में ज्यादा महत्त्व दिया गया है। शिव के प्रमुख मन्त्रों में पंचाक्षर, ॐकार तथा महामृत्युञ्जय आदि की चर्चा की गयी है। पंचाक्षर मंत्र को सर्वश्रेष्ठ मन्त्र माना गया है तथा इसमें सभी लोगों-स्त्री हो या शूद्र, मलेच्छ हो या राक्षस, शुद्ध हो वा अशुद्ध-का समानरूप से अधिकार है। शैवतीर्थों में काशी को विशेष महत्त्व दिया गया है। इसका उल्लेख लगभग सभी पुराणों में है।

एक और बात सभी पुराणों में कही गयी है। वह यह कि तीनों प्रमुख देवता(ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव) तत्त्वतः एक ही हैं। एक ही परमसत्ता, सदाशिव, सृष्टिव्यापार के लिये अपने को तीन रूपों में विभक्त कर लेती है। अतः प्रपंच के धरातल पर इन तीनों में भेद है परन्तु मूलतः वे सब एक ही हैं। ये तीनों देव प्रकृति के विभिन्न गुणों को स्वीकार कर पैदा हुए हैं अतः इनमें अलग-अलग गुणों की प्रधानता होती है। इसी कारण इनके कार्य भी अलग-अलग नियत किये गये हैं। भगवान् विष्णु का कार्य सृष्टि का पालन करना है अतः वे धरती पर बार-बार अवतार लेकर दुष्टों और राक्षसों का विनाश करते रहते हैं। चूँकि वे सत्त्वगुण से युक्त हैं अतः उन्हें संहार करने के लिये शिव की शक्ति का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि वे ही संहार के देवता हैं। इसीलिये अनेक पुराणों में विष्णुजी को संहारक शस्त्रों(सुदर्शन चक्र आदि) की प्राप्ति शिवजी से दिखायी गयी है। तीनों ही देवता एक दूसरे की मदद से सृष्टिव्यापार चलाते रहते हैं। अन्त में अर्थात् महाप्रलय में परमशिव ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र सहित समस्त सृष्टि का नाश कर डालते हैं और अपनी अद्वैत निष्कल समाधि में लीन हो जाते हैं।

S S S S S S S S

जो पुरुष नियमपूर्वक व्रत का पालन करता हुआ प्रतिमास अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करता है तथा जो केवल मद्य और मांस का परित्याग करता है, उन दोनों को एक-सा ही फल मिलता है।

यो यजेताश्वमेधेन मासि मासि यतव्रतः।
वर्जयेन्मधु मांसं च सममेतद् युधिष्ठिर।। (महा. अनु. पर्व 115/8)